भगवान श्री चित्रगुप्त सृष्टि का सृजन

भारतीय कालगणना के अनुसार आजकल विश्व में सृष्टि रचना का सातवाँ मन्वन्तर चल रहा है ।

(1) प्रथम मन्वन्तर में स्वायंम्भुव मनु के समय नाक्षत्रिक जगत तैयार हुआ।

(2) दूसरे मन्वन्तर में स्वारोचिष मनु के समय पृथ्वी तैयार हुई।

(3) तीसरे मन्वन्तर में औतमि मनु के समय पृथ्वी से चन्द्रमा अलग हुआ ।

(4) चौथे मन्वन्तर में तामस मनु के समय में समुद्र से भूमि निकली।

(5) पाँचवें मन्वन्तर में रैवत मनु के समय में वनस्पति उत्पन्नहुई।

(6) छठे मन्वन्तर में चाक्षुष मनु के समय में कीट, पशु और पक्षी उत्पन्न हुए।

(7) सातवें मन्वन्तर में वैवस्वत मनु के समय में मनुष्यों का जन्म हुआ । इस सातवें मन्वन्तर में (जो इस समय चल रहा है) सातवें ब्रह्मा (ब्रह्मदेव) ने सबसे पहले सनक, सनन्दन, सनातन और सनतकुमार, यह चार निवृत्तिपरायण ऊर्ध्वरेता मुनि उत्पन्न किये । यह मुनि संसार से पूर्णतया विरक्त थे और इन्होंने ब्रह्मा के कहने पर भी सृष्टि उत्पन्न करने में कोई रूचि नहीं ली ।
(श्रीमद्भागवत पुराण, कन्ध–3, अध्याय–12, श्लोक 4–5)

इन विरक्त ऋषियों से अपेक्षा पूरी न होने पर आदि पिता ब्रह्मा जी ने क्रोध में भरकर रूद्र को (भगवान अर्धनारीश्वर) उत्पन्न किया। क्रोध का निर्माण, रूद्र जन्मते ही फूट–फूटकर रोने लगे । अतः उनका नाम रूद्र पड़ गया । वे प्रथम प्रजापति हुए । उन्होंने अपने ही समान अत्यन्त भयंकर सन्तानें उत्पन्न की । यह सनतानें झुण्ड बनाकर संसार में जो कुछ दिखाई पड़ा उसका ही भक्षण करने लगी । तब ब्रह्मा जी ने दुःखी होकर उनको बन में तपस्या करने के लिए भेज दिया (तदैव श्लोक 7–20)

ब्रह्मा जी ने अपने तीसरे संकल्प में 10 पुरूषों को अपनी मानस संतति के रूप में जन्म दिया । इनके नाम थे – मारीच, कश्यप, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य , पुलह, कृतु, भृगु, वशिष्ठ, नारद और कर्दम । ब्रह्मा जी ने नारद को छोड़कर शेष नौ ऋषियों को – ख्याति, भृति, सम्भूति, भगवान श्री चित्रगुप्त क्षमा, प्रीति, सन्मति, ऊर्जा, अनुसूया और प्रसूति नाम की नौ कन्याओं को उत्पन्न कर पत्नी रूप में सौंप दिया (भा.पु. श्लोक 21–27 तथा विष्णु पुराण अंश–1, अध्याय–7 श्लोक 4–7) इन्हीं के ऋषियों के द्वारा अधिकांश मानव सृष्टि की रचना हुई जो कालान्तर में देव, दैत्य, दानव आदि कहलाये।

जब सृष्टि पर्याप्त बड़ी हो गयी तब ब्रह्मा जी को ऐसा लगा कि इन मानवों को उच्च गुणों से युक्त करने के लिए उन्हें कुछ उच्च, परिष्कृत, ज्ञान–विज्ञान और ललित कलाओं का ज्ञान दिया जाना चाहिए जिससे वे समाज में परस्पर सद् व्यवहार एवं नैतिकता का आचरण करते हुए धर्म (समाज की धारणा) के आवश्यक नियमों को अपने जीवन में कार्यान्वित कर सकें । इसके लिए ब्रह्मा जी ने पुनः ध्यान लगाया । चौदवीं संतान के रूप में ललित कलाओं, विद्या और ज्ञान की अधिष्ठात्री देवी भगवती सरस्वती का जन्म हुआ।

भगवान श्री चित्रगुप्त का आविर्भव (प्रथम आख्यान)

भगवती सरस्वती के प्रयास के पश्चात् भी जब समस्त प्राणियों में सद्भाव उत्पन्न न हो सका और पाप, अज्ञान और दुराचार प्राणियों में उपस्थित रहे तब एक योग्य, निष्पक्ष पिता के समान ब्रह्मा जी के मन में यह विचार आया कि पापियों के लिए दण्ड और धर्म का आचरण करने वालों के लिए पुरस्कार की व्यवस्था की जानी चाहिए । अतः उन्होंने पुनः समाधि लगाई और पुराणों के अनुसार 11 सहस्त्र वर्ष की समाधि के पश्चात् पुनः एक ऋषि को मानव पुत्र के रूप में उत्पन्न किया। (पुराणों में सहस्त्र शब्द अनेकों आख्यानों में प्रयुक्त हुआ है । "हिन्दू इतिहास" के अनुसार "सहस्त्र" का अर्थ "लगभग" है ।)

समाधि भंग होने के पश्चात् उन्होंने एक दिव्य पुरूष को अपने सामने खड़ा पाया, जिसे देखते ही वे भावविभेर हो उठे और उन्हें विश्वास हो गया कि अब उनकी भावना के अनुरूप विश्व के समस्त प्राणियों के पाप और पुण्य का लेखा–जोखा रखने तथा उन्हें दंडित अथवा पुरस्कृत करने के लिए उन्हें उपयुक्त संतान प्राप्त हो गई । उन्होंने इस दिव्य पुरूष को चित्रगुप्त कहकर सम्बोधित किया क्योंकि इनका चित्र ब्रह्मा जी के मानस में सुप्तावस्था में था, अर्थात् गुप्त था । भगवान श्री चित्रगुप्त का स्वरूप कमल के समान नेत्रों वाले, पूर्ण चन्द्र के समान मुख वाले, श्यामवर्ण, विशाल बाहु, शंख के समान ग्रीवा वाले, शरीर पर उत्तरीय, गले में वैजयंती माला, तथा हाथों में शंख, पत्रिका, लेखनी तथा दवात वाले एक अत्यन्त भव्य देवपुरूष का था।

CS Scanned with CamScanner

श्री चित्रगुप्त जी का आविर्भाव (द्वितीय)

मत्स्य पुराण में आदि पिता ब्रह्मा जी के 13 मानस पुत्रों एवं एक पुत्री के अतिरिक्त दक्ष प्रजापति की भी मानस पुत्र के रूप में उत्पत्ति का वर्णन दिया हुआ है । उसके अनुसार दक्ष की उत्पत्ति आदि पिता ब्रह्मा के दक्षिण अंगुष्ठ (अंगूठा) से हुई । दक्ष का अर्थ है चतुर और मानव की अधिकांश कलाओं के लिए उसका दक्षिण अंगुष्ठ ही उत्तरदायी होता है । दक्ष प्रजापति, एक प्रजापति के लिए अभीप्सित, सभी श्रेष्ठ गुणों से युक्त थे । महाभारत के अनुसार दक्ष, प्रचेता के पुत्र थे "दक्षः प्रा चेतसो यथा" । (महाभारत शान्ति पर्व 23,11,51) दक्ष की पत्नी आसिवनी ने अदिति नाम की कन्या को जन्म दिया । (आसिवनी वीरण प्रजापति की दुहिता थी अतः इसका दूसरा नाम वीरणी भी था ।) अदिति का विवाह भगवान मरीचि कश्यप के साथ हुआ । मरीचि कश्यप अपने समय के अत्यन्त श्रेष्ठ ऋषि माने जाते थे । इनके पुत्र विवस्वान आदित्य या सूर्य हुए जो मन्त्रदृष्टा थे (ऋग्वेद–10/13) विवस्वान का विवाह सुरेणु के साथ हुआ । विवस्वान के पुत्र वैवस्वत मनु भी मन्त्रदृष्टा थे । इनके एक भाई यम और बहन यमी (यमुना) का भी वर्णन मिलता है । मनु–भ्राता, यम भी मन्त्रदृष्टा थे । यही वैवस्वत यम कालान्तर में चित्रगुप्त के नाम से प्रसिद्ध हुए जैसा कि आगे स्पष्ट होगा । (शतपथ, ब्राह्मण 13/4/3/3) आचार्य कौटिल्य (चाणक्य) के द्वारा भी वैवस्वत मनु को मनुष्यों का प्रथम राजा होना स्वीकार किया गया है ।

दक्ष प्रजापति (ब्रह्मदेव के मानस पुत्र)

(पत्नी आसिवनी या वीरणी)

⇩

अदिति–कन्या

(पति मरीचि कश्यप)

⇩

विवस्वान–अदिति पुत्र आदित्य या सूर्य

(पत्नी सुरेणु या संज्ञा)

मंत्रदृ ष्टा – ऋग्वेद 10/13

⇩

वैवस्वत मनु	वैवस्वत यम	यमी (यमुना)
सृष्टि के प्र थम	(चित्रगुप्त)	
शासक या राजा	मंत्रदृष्टा–ऋग्वेद 10/14	
मंत्रदृष्टा–ऋग्वेद–		
8/8/27/21		

Scanned with CamScanner

भ्रातृ द्वितीया (भैया दूज)

एक बार बहुत समय के पश्चात् वैवस्वत यम (श्री चित्रगुप्त) अपनी बहन यमी के घर गये । बहन बड़ी प्रसन्न हुई । मिष्ठान, पकवान आदि से स्वागत किया। भाई की पूजा करके उनका प्रेमपूर्वक तिलक किया। यही प्रथा व दिन दीपावली के बाद दूसरे दिन भाई द्वौज (भैया–दूज) के नाम से प्रसिद्ध हो गई, जो आज भी सारे विश्व में हिन्दुओं में बहन–भाई के प्रेम के प्रतीक के रूप में मनायी जाती है । क्योंकि समस्त विश्व में मात्र चित्रांश (कायस्थ) बन्धु ही भैया दूज को श्री चित्रगुप्त पूजन के रूप में मनाते हैं।

चित्रांशों का गोत्र

मंत्रदृष्टा, ऋषि, भगवान श्री चित्रगुप्त (यम) की संतान होने के कारण स्वाभाविक रूप से ही समस्त चित्रांशों का वर्ण उस समय की प्रचलित कर्मणा व्यवस्था के अनुसार ब्रह्मण हुआ । श्री चित्रगुप्त तथा उनकी समस्त संतानों की शिक्षा दीक्षा उस समय के श्रेष्ठतम ऋषि भगवान कश्यप के आश्रम पर हुई। अतः समस्त चित्रांशों का गोत्र कश्यप माना गया । कालान्तर में चित्रांश अपने कई गोत्र बताने लगे । यह किस कारण हुआ इसका वर्णन कहीं नहीं मिलता । परन्तु एक बात का ध्यान रखें अपनी अल्ल (वंश का प्रचलित सम्बोधन) को गोत्र न समझें । गोत्र का नामकरण तो किसी वैदिक ऋषि के नाम पर ही हो सकता है । यदि आपके पारिवारिक गोत्र का नाम यदि किसी वैदिक ऋषि के नाम पर चला आ रहा है तो उसे ही मान्यता दें अन्यथा अपना गोत्र कश्यप मानें।

वेद एवं पुराणों में भगवान श्री चित्रगुप्त जी का वर्णन

ऋग्वेद में भगवान चित्रगुप्त जी या यम का वर्णन वेदों के 14 श्लोकों में चित्र, चित्रावसों, चित्रमानों, चित्रश्रवस्तम, चित्र इद्रा जा यम आदि नामों से दिया गया है और इन सब श्लोकों में चित्रगुप्त जी की स्थिति एक देवता या जन–समाज का पालन करने वाले जन हितैषी सर्वशक्तिमान देवता के रूप में मानी गई है। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद में कई स्थानों पर भगवान चित्रगुप्त की देवरूप में स्तुति की गई है । इतना ही नहीं उन्हें शिव, उमा, स्कन्द, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र आदि के समान पूज्य एवं उपास्य मानते हुए सब प्रकार के सुख और ऋद्धि सिद्धि प्रदान करने वाला माना गया है तथा इन्हें प्रदान करने के लिए उनकी प्रार्थना की गई है । जहाँ तक पुराणों का प्रश्न है तो सभी पुराणों में कित्ते न किसी रूप में भगवान चित्रगुप्त जी तथा कायस्थ जाति का वर्णन दिया हुआ है । श्री चित्रगुप्त जी के अतिरिक्त वेदों और

पुराणों में श्री धर्मराज तथा श्री यमराज का भी उल्लेख करते हुए उनकी उच्च देवता के समान स्तुति की गई है । उनको सब प्रकार से मनुष्य समाज को सुख एवं वैभव प्रदान करने वाला तथा हितैषी बताया गया है । इस लेख में इन्हीं तीन देवों के परस्पर सम्बन्ध में विचार प्रस्तुत किया गया है। भगवान वेद व्यास ने महाभारत काल में (त्रेतायुग) में जब स्मृतियों के रूप में प्रचलित वेदों का संकलन किया और उन्हें भगवान गणेश द्वारा लिखित रूप में आर्य जाति के लाभार्थ प्रस्तुत किया तब यह प्रश्न उत्पन्न हुआ कि वेदों में जिन प्रसंगों एवं सूक्तियों का उल्लेख आया है उनका स्पष्टीकरण सरल भाषा में करने के लिए पुराण ग्रन्थों की रचना की जावें, जिससे कि आम जनता के लिए वेदों का ज्ञान सुलभ हो सके । सर्वप्रथम ब्रह्मपुराण और पद्मपुराण की रचना की गई । अतः पद्मपुराण समस्त 18 पुराणों में से सबसे अधिक प्राचीन और अधिकृत ज्ञान का भण्डार माना जाता है। इसमें कुल 55000 श्लोक हैं और यह सब पुराणों में सबसे अधिक प्राचीन और बड़ा है ।

पद्मपुराण का एक विशेष श्लोक

भगवान चित्रगुप्त के सन्दर्भ में पद्मपुराण के उत्तरखण्ड में श्लोक 225/1–2 में मुनिश्रंग द्वारा भगवान यमराज की की गई स्तुति की जो शब्दावली है वह निम्न प्रकार है –

ऊँ यमाय धर्मराजाय मृत्यवे अन्तकाय च।
वैवस्वताय कालाय सर्व भूतक्षयाय च ।।
औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने।
वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः ।।

इस श्लोक का हिन्दी में जो अर्थ दिया हुआ है वह निम्न प्रकार है – "यम, धर्मराज, मृत्यु, अन्तक, वैवस्वत, काल, सर्वभूतक्षय, औटुम्बर, दध्न, नील, परमेष्ठी, वृकोदर, चित्र और चित्रगुप्त इन चौदह नामों से पुकारे जाने वाले भगवान यमराज को नमस्कार है।" (गीता प्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित पद्मपुराण– पृष्ठ संख्या 893)

यम, धर्मराज और चित्रगुप्त

वेदों और पुराणों में इन तीन देवताओं की प्रशंसा और स्तुति में अनेकों श्लोक दिये गये हैं परन्तु पद्मपुराण के उक्त श्लोक से यही सिद्ध होता है कि यह तीनों नाम एक ही महान देवता के विभिन्न नाम हैं । अतः इन तीनों नामों से दिये गए वेदों और पुराणों के समस्त संदर्भों को भगवान चित्रगुप्त का वर्णन ही माना जाना चाहिए। इस तथ्य से यह भी सिद्ध होता है कि भगवान चित्रगुप्त भगवान धर्मराज के लेखाकार या मुनीम नहीं थे । अपितु वह (जैसा कि माना जाता है उसके विपरीत) महान मंत्रदृष्टा ऋषि और भगवान की संज्ञा के समकक्ष पूज्य, सर्वशक्तिमान और सर्वप्रभुता सम्पन्न देवपुरूष थे । सीधी सी बात है कि किसी लेखाकार या मुनीम की एक देवता, ऋषि या सर्वशक्तिमान, प्रभुता सम्पन्न देवता के समान प्रशंसा, स्तुति और गुणगान आर्य जाति के श्रेष्ठतम धार्मिक ग्रन्थ वेदों में नहीं की जा सकती। इसके अतिरिक्त ऋग्वेद के दशम मण्डल के चौदहवें सूक्त के सभी 16 श्लोकों में वैवस्वत यम (श्री चित्रगुप्त) को एक मंत्रदृष्टा ऋषि हैं और वे विश्व के समस्त प्राणियों के पुण्य और पाप कर्मों का विधिवत लेखा–जोखा रखते हैं । जब वे दुष्टों व पापियों को दंड देते हैं तो वे दंडाधिकारी के नाते यमराज का विकराल स्वरूप धारण कर लेते हैं और जब वे पुण्यात्माओं को पुरस्कृत करते हैं तब वे एक हितैषी, शुभचिंतक पिता के समान धर्मराज का रूप धारण कर लेते हैं।

हस्तलिखित पद्मपुराण तथा उत्तरवर्ती अन्य पुराण

भगवान चित्रगुप्त जी के सम्बन्ध में पुस्तकें लिखते समय कुछ विद्वान लेखकों ने पद्मपुराण की एक हस्तलिखित प्रतिलिपि का सन्दर्भ लिया है । इस हस्तलिखित पुस्तिका में श्री चित्रगुप्त जी के सम्बन्ध में बहुत लम्बी चौड़ी कथायें प्रस्तुत की गयी हैं। गीता प्रेस गोरखपुर ने इस हस्तलिखित पुस्तक को अमान्य किया है । कारण यह है कि इस पुस्तक में दिया गया उल्लेख न तो पद्मपुराण के उत्तर खण्ड के 225वें श्लोक से मेल खाता है और न ही त्रेतायुग में लिखे गये पद्मपुराण की मूल प्रति का अभी तक हस्तलिखित रूप में मौजूद रहना सम्भव है पद्मपुराण की हस्तलिखित प्रतिलिपि तथा बाद में लिखे गए लगभग अन्य सभी पुराणों में श्री चित्रगुप्त जी को पाप और पुण्य का लेखा–जोखा रखने वाले धर्मराज के एक लेखाकार के रूप में प्रस्थापित करने का प्रयास किया गया है। प्रश्न यह है कि क्या कहीं उत्तरवर्ती पुराणों के काल में भगवान चित्रगुप्त जी का अवमूल्यन कर उनके महत्व को कम करने की किसी व्यक्ति अथवा वर्ग विशेष की यह योजनाबद्ध साजिश तो नहीं है ? यह तो एक सर्वमान्य निर्विवाद तथ्य है कि बाद में लिखे गये पुराणों में बहुत कुछ घालमेल हुआ है और उनमें प्रक्षिप्त प्रसंगों और वर्णनों की कमी नहीं है । यह भी एक सत्य तथ्य है कि किसी भी पूजन – आयोजन के प्रारम्भ में पूर्व काल में अन्य सभी देवताओं के आवाहन के साथ–साथ श्री चित्रगुप्त जी के आवाहन के भी मंत्र थे और उनका अन्य सभी देवताओं के समान विधिवत् आवाहन किया जाता था परन्तु अब अनेक पूजा व्यवस्थाओं में भगवान चित्रगुप्त जी के आवाहन के

श्लोकों को अनुपस्थित पाया जाता है और उनका आवाहन भी नहीं किया जाता है । ऊपर बताये गये तथ्यों के उपरान्त क्या यह सोचना एक अनुचित बात होगी कि भारत के लगभग ग्यारह करोड़ भारतीयों के पूज्य पिता, आदि देव, भगवान के विशिष्ट अंशावतार, आदि पिता श्री ब्रह्माजी के मानस पुत्र, अथवा सूर्य पुत्र, हमारे आराध्य देव भगवान श्रीं चित्रगुप्त जी की वेदों में जो एक अत्यन्त उच्च और प्रातः स्मरणीय देवता के नाते स्थिति थी। उसका अवमूल्यन करने के लिए ही उत्तर पौराणिक काल में किसी व्यक्ति अथवा वर्ग द्वारा यह विनिंदित कार्य किया गया हो और एक परम् शक्तिमान, सर्वप्रभुता सम्पन्न वैदिक देवता, भगवान श्री चित्रगुप्त का कुत्सित अवमूल्यन करके उन्हें धर्मराज के लेखाकार (मुनीम) के नाते प्रस्थापित करने का कुत्सित प्रयास किया गया हो । यह तथ्य एक ऐसा विषय है जिस पर शोध किये जाने की आवश्यकता है । पुराणों में ब्रह्मा के अन्य सभी मानस पुत्रों का वर्णन करते समय यह बताया गया है कि वे जब उत्पन्न हुए तब सब प्रकार से योग्य, शिक्षित और समाज का मार्ग दर्शन करने में सामर्थ थे परन्तु श्री चित्रगुप्त जी के सम्बन्ध में यही लिखा गया है कि उनको उत्पन्न होने के पश्चात् प्रशिक्षण के लिए उज्जयिनी भेजा गया जहाँ कि उन्होंने तप किया और ज्ञान प्राप्त किया।

ब्राह्मीलिपि के आविष्कारक

यह एक ऐतिहासिक शास्त्र प्रमाणित वैदिक सत्य ही कि भगवान श्री चित्रगुप्त जी से पूर्व भाषा की कोई लिपि नहीं थी । सभी धार्मिक ग्रन्थों को स्मृतियों के रूप में याद रखा जाता था और पीढ़ी दर पीढ़ी पठन–पाठन अध्यापन एवं उनका प्रवचन किया जाता था। ब्रह्मचारी एवं विद्वान ब्राह्मणगण भी उन्हें कंठस्थ कर अपने ज्ञान को योग्य शिष्यों को सौंपते जाते थे । श्री चित्रगुप्त जी ने माँ सरस्वती से विचार विमर्श के पश्चात् आदि पिता श्री ब्रह्मदेव के नाम पर ब्राह्मी लिपि का निर्माण किया। इस लिपि का सर्वप्रथम उपयोग भगवान वेदव्यास के द्वारा सरस्वती नदी के तट पर उनके आश्रम में वेदों के संकलन से प्रारम्भ किया गया । वेदों के पश्चात् उपनिषद आरण्यक ब्राह्मण ग्रन्थों तथा पुराणों का संकलन कर उन्हें लिखित रूप प्रदान किया गया। कायस्थों का वर्ण क्या है ?

भगवान श्री चित्रगुप्त जी की उत्पत्ति की प्रथम कथा के अनुसार कायस्थों का वर्ण ब्राह्मण होता है और द्वितीय कथा के अनुसार क्षत्रिय। एक दूसरे प्रकार से भी हम विचार कर सकते हैं कि जब श्री चित्रगुप्त जी का परिवार अस्तित्व में आया तो ऋषि सन्तान होने के कारण सबका वर्ण ब्रह्मण था परन्तु जब देश में प्रथम सूर्य वंश तथा चन्द्र वंश की सत्ता स्थापित हुई और वैवस्वत मनु ने प्रथम राज्य शासन व्यवस्था की स्थापना की तब उन्होंने उस समय के एक मात्र बुद्धिजीवी वर्ग ब्राह्मणों में से सबसे अधिक मेधावी, कुशाग्र बुद्धि वाले, नई योजनाओं एवं कल्पनाओं का चिन्तन कर सकने वाले तथा प्रशासनिक नियमों एवं व्यवस्थाओं का निर्माण कर सकने की क्षमता रखने वाले अपने भाई मनु के पुत्रों को प्रशासन को चलाने के लिए चुना और उस समय क्योंकि वर्ण व्यवस्था जन्मना नहीं कर्मणा थी इस कारण प्रशासन के लिए चुने गये इन श्रेष्ठ बुद्धिजीवी ब्राह्मणों का वर्ण क्षत्रिय हो गया क्योंकि प्रशासन चलाने वालों का वर्ण उस समय क्षत्रिय निर्धारित किया गया था। इस प्रकार अपने इस विशाल भारतवर्ष के कोने–कोने में फैले 11 करोड़ चित्रांश बन्धुओं में से कुछ अपना वर्ण ब्राह्मण मानते हैं और कुछ क्षत्रिय । स्वामी विवेकानन्द ने भी अपने को क्षत्रिय वंश का माना है । अपने को क्षत्रिय मानने वाले बंधुओं ने अपने नाम के आगे स्थान–स्थान पर सिंह शब्द लगाना प्रारम्भ कर दिया तथा भगवान श्री चित्रगुप्त जी का देवरूप बदल कर उनके मुँह पर मूंछे लगा दी तथा एक हाथ में तलवार भी थमा दी । परन्तु अब प्रश्न यह उठता है कि क्या ब्राह्मण या क्षत्रिय चित्रांश बन्धुओं को अपने वर्ण में मिलाने को तैयार हैं ? उत्तर है, "नहीं" । तो फिर यह वितन्डावाद क्यों ? चित्रांश बन्धुओं को अपने को चित्रांश या कायस्थ जो भी अच्छा लगे कहना चाहिए और सबको गर्व के साथ वह कहना चाहिए कि वे चित्रांश या कायस्थ हैं । अपनी पहचान बताने में उन्हें न संकोच होना चाहिए और न ही शर्म आना चाहिए । सभी को अपने नाम के आगे किसी कायस्थ सूचक उपनाम को अवश्य लिखना चाहिए । जिससे सभी को पता चल सके कि वे किस परिवार के हैं । पीछे कभी किन्हीं परिस्थितियों वश स्थान–स्थान पर हमें अपनी वास्तविकता छिपाने के लिये हमें मजबूर होना पड़ा था अब हमें चाहिये कि हम इसको भूल जायें । आज इस युग की महती आवश्यक है कि उसके महत्व को पहचाने । प्रचलित उपनाम के आगे कायस्थ सूचक उपनाम जोड़ देने में कोई अनुचित बात नहीं होगी । क्योंकि अब तो अनेकों व्यक्ति इस प्रकार की दो–दो संज्ञायें जोड़ने में भी गर्व का अनुभव करने लगे हैं । वर्ण नाम के परिवर्तन से न वंश बदल जाता है, न उसका इतिहास और न विशेषताएँ । कभी हम विश्व में आर्य शब्द से विभूषित किये जाते थे परन्तु आज हम अपने को हिन्दू कहने में गर्व का अनुभव करते हैं यद्यपि यह नाम दूसरों के भी द्वारा दिया गया है । आर्य शब्द के प्रयोग से तो अब किसी दलित जाति के व्यक्ति का बोध होता है ।

Scanned with CamScanner

कायस्थ संज्ञा की उत्पत्ति

इस सम्बन्ध में भी दो उल्लेख प्राप्त होते है –

(1) ब्रह्मा जी की तपस्या के पश्चात् जब चित्रगुप्त जी का आविर्भाव हुआ तथा श्री बह्मा जी ने उनको चित्रगुप्त का नाम तो दिया ही तथा उसी के साथ यह भी कहा कि क्योंकि तुम मेरी काया में स्थित थे अतः आने वाले समय में तुम्हारी संतान कायस्थ कहलायेगी।

(2) राज्य सत्ता की स्थापना होने पर ब्राह्मण वर्ग के जो विशिष्ट सदस्य राज्य संचालन के लिये चुन लिये गये वे कालांतर में राजाओं के समान सुख और ऐश्वर्य का जीवन बिताने लगे तथा ब्राह्मणों के समस्त कर्म काण्ड को तिलांजलि दे दी । इस पर ब्राह्मणों ने कुपित होकर उन्हें अपने वर्ग से निष्कासित कर दिया और उन्हें भ्रष्ट घोषित कर दिया । साथ ही यह भी कहा कि धर्म की नहीं अब तुम्हें केवल अपनी काया के सुख की चिंता है तो तुम्हारा वर्ण कायस्थ होगा और भविष्य में तुम्हारे सारे वंशज कायस्थ कहलायेंगें । आर्ययुग में ब्राह्मणों द्वारा वर्ण से च्युत किया जाने की प्रथा आम थी । राजा हरिश्चन्द्र के समय में ऋषि विश्वामित्र ने अपने भांजे शुनशेष को बलियुग (जिस खंभे में बांधकर बलि दी जाती थी) से उतारकर उसके पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों को जो शुनशेष की बलिव्यथा के लिये उत्तरदायी थे वर्णच्युत करके दक्षिण में निष्कासित कर दिया था। रावण के परिवार के लोग भी इसी वर्ग के थे । उसने इन सबको संगठित कर "रक्ष संस्कृति" के नाम से "रक्ष संघ" बनाया और उत्तर में आर्यों का विरोध किया (वयं रक्षामः लेख, आचार्य चतुरसेन शास्त्री) कायस्थ कोई जाति नहीं एक विशाल परिवार है अधिकांश

Scanned with

कायस्थ बन्धु अपने को कायस्थ जाति के नाम से संबोधित करते है और श्री चित्रगुप्त के 12 पुत्रों की सन्तान के परिवारों को 12 उपजातियों के नाम से मानते हैं । ज्ञात हो कि जाति किसी पेशे या आजीविका के साधन को चलाने वाले व्यक्तियों की होती है, जैसे चमड़े का काम करने वाला चर्म कार, लोहे का काम करने वाला लुहार, लकड़ी का काम करने वाला बढ़ई, दूध बेचने वाला ग्वाला, बाल काटने वाला नाई, बर्तन बनाने वाला कुम्भकार और कृषि करने वाला कृषक आदि । इस प्रकार कर्म के आधार पर जातियाँ बनी हैं । कायस्थ बुद्धिजीवी है उनका न कोई पेशा है ना कोई व्यवसाय । अतः उसको जाति की संज्ञा देना उचित नहीं है । जहाँ तक 12 उपजातियों का प्रश्न है वह तो और भी बुद्धिशून्यता का लक्षण है । भाई–भाई की संतान किस प्रकार जाति या उपजाति की कही जा सकती है ? इस प्रश्न पर

Scanned with CamScanner

गंभीरतापूर्वक विचार करें । इस जाति और उपजाति की पूर्व काल में प्रचलित धारणा से हमारे कायस्थ महापरिवार को बहुत हानि पहुँची है । हम अपने परिवार के बन्धुओं को अर्थात् चाचा–ताऊ के पुत्रों को भी विभिन्न जाति का मानकर उनसे घृणा करते रहे और उनके साथ सम्बन्ध बनाने से भी बचते रहे । यह प्रसन्नता की बात है कि आज स्थिति में पर्याप्त सुधार हुआ है और हम अपनी अंधेरी गलियों को छोड़कर प्रकाश के युग में आ गये हैं।

विश्व के समस्त चित्रांश (कायस्थ) अपने को भगवान चित्रगुप्त की सन्तान मानते हैं और इस नाते सब एक विशाल चित्रांश परिवार के अभिन्न सदस्य हैं । हमारा यह चित्रांश परिवार 11 करोड़ की संख्या में भारत में कश्मीर से लेकर कन्या कुमारी तक और पंजाब से लेकर आसाम तक फैला हुआ है। हमें अपनी इस स्थिति पर गर्व करना चाहिए और पुरानी भूलों को सुधार लेना चाहिए । हम सबसे डंके की चोट पर गर्व से कहें कि हम कायस्थ हैं और कायस्थ समाज एक महापरिवार है, जाति नहीं।

अंत में निवेदन

यह लेख भगवान श्री चित्रगुप्त जी और कायस्थ समाज के बारे में प्रचलित मान्यताओं और धारणाओं को समाप्त कर सत्य तथ्यों के आधार पर एक नवीन दिशा देने का प्रयास है । कायस्थ समाज के मनीषियों एवं वरिष्ठजनों से अनुरोध है कि तथ्यों एवं दिये गये प्रमाणों पर गम्भीरतापूर्वक मनन करें , चिन्तन करें और यदि उचित समझे तो परिवर्तन के रूप में स्वीकार करें। साथ ही यह भी अनुरोध है कि पिता श्री ब्रह्मदेव, विद्या की देवी मां सरस्वती तथा भगवान श्री चित्रगुप्त का चित्र अन्य देवी देवताओं के चित्रों के साथ अपने पूजास्थल पर रखें तथा नित्य प्रति उनका भी पूजन करें।